एक पाठक का दर्द : पढ़ने कहां जाऊं ?

❑ रवीन्द्र सिंह

माध्यमिक शिक्षा मण्डल मध्य प्रदेश साहित्य और समाज के बीच खाई बढ़ा रहा है । पुस्तकालय विज्ञान के आचार्य डा. रंगनाथन ने कहा है, ''हर पुस्तक को उसका पाठक और हर पाठक को उसकी पुस्तक मिलनी चाहिए'' । म.प्र. शिक्षा विभाग और माध्यमिक शिक्षा मण्डल दोनों ही पढ़ाने वालों को पुस्तकों से दूर कर रहे हैं।

हायर सैकेण्डरी पाठ्यक्रम के प्रारम्भ होते ही भाषाओं की उपेक्षा और ट्यूशनबाजी ने जन्म लिया । विज्ञान विषय के अध्यापन, प्रयोगशाला रहित प्रायोगिक परीक्षाओं, व आंतरिक नम्बरों के अधिकार ने कला एवं भाषा शिक्षकों की उपेक्षा कर उनमें घुटन और असंतोष पैदा किया । ''पैसा लेकर पास होने लायक बना दो यह ट्यूटर का सबसे बड़ा गुण होता है ।'' ट्यूटर और नकल के सहयोग से पास होने वाले जब शिक्षक पद पर आये तो पदोन्नति से वंचित शिक्षकों में असंतोष और घुटन स्वभाविक थी ।

पढ़ने पढ़ाने वालों के आंकड़े बढ़ना शुरू हुए तो विभाग ने धन का रोना शुरू किया। 14 वर्ष तक के बच्चों को निशुल्क शिक्षा है । तब उनकी संपूर्ण आवश्यकताओं को पूरा भी किया जाना ही चाहिए । यह दायित्व किस पर है ? बच्चों में प्रतिस्पर्धा के अवसर बढ़ाकर, प्रमाण पत्रों की खरीददारी को महत्व दिया गया है ।

म.प्र. में पुस्तकालय अधिनियम पारित नहीं होने व पुस्तक व्यवसाय महानगरों तक सीमित होने से पुस्तक बाजार गांवों तक पहुंचना तो दूर, छोटे शहरों और कस्बों में भी नष्ट हो गया । इसके स्थान पर नकल का साधन छापकर बेचने वाले दस्तक देने लगे हैं। स्कूलों के आस-पास ''सफलता के साधन पढ़िये'' के विज्ञापन मिलेंगे । प्रतिवर्ष इनकी कीमत में 20-25 फीसदी वृद्धि हो जाती है । दुकानदारों को 40 फीसदी कमीशन और वापसी की गारंटी की सुविधा रहती है ।

समाज में लिखने की आदत घटाई गई है । भाषा शिक्षकों की पर्याप्त व्यवस्था एवं स्वाध्याय के साधन नहीं होने से ट्यूटरों ने लिखाने की अपेक्षा सफलता के साधनों पर निशान लगवाना अधिक सुविधाजनक समझा है । इससे कम श्रम से अधिक धन मिल जाता है। माध्यमिक शिक्षा मंडल ने लघुत्तरीय बड़े प्रश्न-पत्र बनाकर परीक्षाओं को लग जाये तो तीर बना दिया है । परीक्षा के दिनों में प्रशासन नकल रोकने का प्रयास करता है, इसके बाद साल भर मौन रहकर यह विचार नहीं करता है कि नकल क्यों होती है । शहरीकरण ने पढ़ने-लिखने वालों को सुविधाभोगी बना दिया है । नई पीढ़ी की जिज्ञासाओं को नष्ट किया जा रहा है । शिक्षकों और विद्यार्थियों में दूरियां बढ़ रही हैं । एक ही भवन में एक से अधिक विद्यालय लगने से पुस्तकालय और खेलने की व्यवस्था नहीं होने से पढ़नेवालों में अनुशासनहीनता और अहं का जन्म हुआ है ।

ट्यूटर अल्पज्ञानी और धन प्रेमी होता है । इनके कारण ही शिक्षकों में आपसी संवादहीनता और बच्चों से अपनत्व कम हुआ है । संपन्न वर्ग के बच्चे स्कूल से लेने नहीं, वहां हुकुम चलाने और धन का प्रदर्शन करने आते हैं ।

पहले बच्चे नकल करने के लिए बारीक-बारीक अक्षरों में छोटे-छोटे कागजों पर लिखते थे । आजकल - वनडे सीरीज के टुकड़े परीक्षा कक्षों के बाहर मिलते हैं ।

सबसे अधिक अन्याय उन बच्चों के साथ होता है जो ग्रामीण क्षेत्रों में रहकर अपनी शिक्षा पूरी करना चाहते हैं । माध्यमिक शिक्षा मंडल और उसके केन्द्राध्यक्ष उनका भरपूर शोषण करते हैं । बड़े-बड़े विज्ञापनों के साथ अधिकतम शुल्क लेकर वायदे किये जाते हैं। स्वाध्याय के लिए जिला मुख्यालय पर नाम मात्र की मार्गदर्शी कक्षाएं लगती हैं जिनसे नियमित विद्यार्थियों के अध्ययन में गतिरोध पैदा होता है । आवेदन करते समय पाठ्यक्रम और पुस्तकें नहीं दी जाती हैं । ट्यूटर और स्कूल दोनों स्वाध्यायी परीक्षार्थियों की उपेक्षा करते हैं । संपन्न वर्ग के लाड़लों से इच्छानुसार धन लेकर उन्हें नकल कराने और प्रमाण पत्र दिलाने वालों का व्यवसाय फल फूल रहा है।

वर्ष 80-81 में खोले गये जिला पुस्तकालयों में अभी नये पद स्वीकृत नहीं हुए हैं और न ही उनके भवन बनाने के संबंध में विभाग पहल कर रहा है । आजादी के 50 वर्ष बाद भी राजा राम मोहन राय लायब्रेरी फाउंडेशन द्वारा नि:शुल्क दी जाने वाली पुस्तकों में 50 फीसदी अंग्रेजी साहित्य होता है । इन पुस्तकों के वर्षों तक पन्ने भी नहीं पलटे जाते हैं । पुस्तकों में वर्गीकरण और सूचीकरण के लिए प्रशिक्षित ग्रन्थपाल के पद हैं ही नहीं । प्रान्तीय भाषाओं की पुस्तकें इन पुस्तकालयों को नहीं दी जाती हैं ।

आवागमन के साधन बढ़ने से हिन्दी बोलने वाले तो तेजी से बढ़े हैं, किन्तु उनकी अपने साहित्यकारों और पुस्तक प्रेमियों से दूरियां बढ़ी भी हैं । कभी-कभी लगता है कि उदारवाद ने साहित्यकारों और प्रकाशकों को अपने जाल में फांस कर आम आदमी को साहित्य से दूर कर दिया है । साहित्यको वस्तु मानकर उसे उपभोग और प्रदर्शन की वस्तु बना दिया है । देश में 61 फीसदी हिन्दी जानने वाले और विदेशों में सैकड़ों विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाने के बाद भी यह प्रचारित किया जाता है कि अंग्रेजी जाने बिना काम नहीं चलता है । ◆